

महिला आत्मकथा लेखन: परिधि एवं विस्तार

सचिन कुमार
शोधार्थी
राजकीय डिग्री कॉलेज
बी०बी० नगर, बुलन्दशहर

डॉ० राजेश कुमार
सहायक आचार्य
राजकीय डिग्री कॉलेज
बी०बी० नगर, बुलन्दशहर

Reference to this paper should
be made as follows:

Received: 07-05-26
Approved: 29-06-26

सचिन कुमार
डॉ० राजेश कुमार

महिला आत्मकथा लेखन: परिधि
एवं विस्तार

Vol. XVII, Sp. Issue July.2026
Article No.12, Pg. 073-077

Similarity Check: 08%

Online available at
<https://anubooks.com/special-issues?url=jgv-si-klsmm-mrt-july-2026>

DOI: <https://doi.org/10.31995/jgv.2026.v17iSI07.012>

सारांश

आत्मकथा, हिंदी साहित्य की लोकप्रिय और सर्वमान्य विधा है। इस विधा में लेखक पाठक को स्वबोध से जगबोध की यात्रा करता चलता है। आत्मकथा लेखक के जीवन सत्यों के साथ साथ उसके युग और समाज की प्रत्यक्ष साक्षी बनकर रहती है। इसीलिए पाठक के लिए आत्मकथा को पढ़ना केवल उसके लेखक के जीवन में झांकना भर नहीं रहता है बल्कि उसके समय से भी साक्षात्कार करना होता है। पिछले कुछ दशकों में हिंदी के कई साहित्यकारों की आत्मकथाएं प्रकाश में आई हैं। पुरुष रचनाकारों के साथ साथ महिला रचनाकारों ने भी इस विधा में रुचि दिखाई है। परिणामस्वरूप इक्कीसवीं सदी ने अनेक महिला रचनाकारों की आत्मकथाएं प्रकाशित हुई हैं। इन आत्मकथाओं ने हिंदी पाठकों, साहित्य समीक्षकों तथा आलोचकों को चिंतन की नई दिशाएं प्रदान की हैं। महिला रचनाकारों ने अपनी आत्मकथाओं में अपने जीवन के साथ साथ अपने समय व समाज के भयावह सचों से सामना कराया है जो कि अविस्मरणीय हैं। इस अवस्था में महिला आत्मकथाओं के रचना विधान और सौंदर्यबोध को समझना आवश्यक हो जाता है। प्रस्तुत शोधालेख में महिला आत्मकथाओं की परिधि एवं परिवृत को समझने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द: महिला आत्मकथा, जीवन, समाज, यथार्थ, परिधि, परिवृत आदि।

**This article has been peer-reviewed by the Review Committee of JGV.*

आत्मकथा, आधुनिक हिंदी साहित्य की लोकप्रिय विधा है। आत्मकथा दो शब्दों आत्म तथा कथा से मिलकर बना है। जिसका अर्थ स्वयं का विवरण अर्थात् आत्मवृत्तांत होता है। “लेखक द्वारा स्वयं लिखे जाने वाले अपने जीवन चरित्र को आत्मकथा कहते हैं।”¹ प्रो० राजेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव के अनुसार “जब कोई व्यक्ति स्वयं अपने बीते जीवन का व्यवस्थित वर्णन लिखता है तब आत्मकथा की सृष्टि होती है।”² हिंदी साहित्यकोश के अनुसार “आत्मचरित हिंदी में आत्मकथा के अर्थ में प्रयुक्त प्रारंभिक शब्द है और तत्पश्चात् आत्मकथा से भिन्न नहीं है। एक सूक्ष्म अंतर कदाचित् यह है कि आत्मचरित्र कहलाने वाली रचना किंचित् विश्लेषणात्मक एवं विवेक प्रधान होती थी और अब आत्मकथा कही जाने वाली कृति अधिक रोचक और सुपाठ्य होती है।”³ आत्मकथा लेखन का सूत्रपात बनारसीदास जैन कृत ‘अर्द्धकथानक’ से माना जाता है। इसके पश्चात् भी जो आत्मकथाएँ प्रकाश में आईं उनमें से भी अधिकांश आत्मकथाएँ पुरुष साहित्यकारों की ही थीं। बीसवीं सदी के अंतिम दशकों में महिला, दलित, आदिवासी समाज से संबंधित साहित्यकारों ने अपनी आत्मकथा लिखकर आत्मकथा लेखन की परंपरा में एक नए युग का सूत्रपात किया तथा आत्मकथा लेखन की परिधि का विस्तार किया। पिछले कुछ समय में अनेक आत्मकथाएँ बहुचर्चित हुई हैं, जिन्होंने पाठकों तथा साहित्य समीक्षकों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। इक्कीसवीं सदी में दलित तथा महिला आत्मकथाओं ने आत्मकथा लेखन की परंपरा को और अधिक विस्तार दिया है। आज आत्मकथा लेखन का स्वर्णिम दौर है। इस दौर में एक के बाद एक अनेक आत्मकथाएँ प्रकाशित हुई हैं, जिन्होंने आत्मकथा विधा को धरातल से क्षितिज पर पहुँचाया है।

इक्कीसवीं सदी में महिला साहित्यकारों ने आत्मकथा लेखन के दौर में प्रवेश किया। कई महिला रचनाकारों की आत्मकथाओं ने समाज में क्रांति का बिगुल फूंक दिया। एकाएक कई महिला आत्मकथाएँ प्रकाश में आईं और लोकप्रिय हुईं। महिला आत्मकथाकारों ने अपनी आत्मकथाओं का सृजन करके हिंदी आत्मकथा साहित्य संसार को नई संवेदना और धरातल प्रदान किया है।

महिला साहित्यकारों ने आत्मकथाओं के माध्यम से अपनी जिंदगी में जुड़े अनकहे सचों से पर्दा उठाया है। स्त्री आत्मकथाकारों ने समाज के उस नर समुदाय को आत्मकथाओं के द्वारा निशाना बनाया है, जिसने सदैव ही उसे हाशिए पर धकेल कर रखा है। भारतीय समाज में स्त्री को पुरुष के समान न मानकर उसके साथ भेदभाव किया गया है। कालांतर में महिलाओं की स्थिति में थोड़ा सुधार आया और वह शिक्षित एवं जागरूक हुईं। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान नारी के समाज में उत्थान के लिए अनेक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त हुआ। शनैः शनैः महिलाओं में जागृति के फलस्वरूप स्त्री में सृजनशीलता का भी विकास हुआ। जिसे स्त्री ने गीत, गजल, छंद, कहानी, आत्मकथा, कविता, उपन्यास, जीवनी, साक्षात्कार, रिपोर्टाज, यात्रा संस्मरण, रेखाचित्र के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। महिला आत्मकथाएँ प्रकाशित होना भी स्त्री जागरूकता तथा संघर्षशीलता का ही परिणाम है। “प्रायः विश्व के सभी देशों में आत्मकथाएँ लिखी गईं, किंतु प्रारंभ में स्त्री आत्मकथाओं का अभाव रहा। वर्तमान में नारी के प्रति समाज में निरंतर कट्टरपंथी मान्यताएँ टूटकर कई मान्यताएँ जन्म ले रही हैं। कट्टरपंथी रीति-रिवाजों से बंधी नारी इन परंपराओं से बाहर निकलने हेतु आतुर है। तमिल, मराठी, बांग्ला और पंजाबी इत्यादि भाषाओं में लिखित आत्मकथाओं से प्रेरित होकर हिंदी लेखिका आत्मकथा लेखन में लीन हुईं। महिला आत्मकथाकार अपने लेखन द्वारा परवर्ती पीढ़ी को जागरूक करती हैं।”⁴ इस कार्य में वे काफी हद तक सफल भी रही हैं।

महिला आत्मकथाकारों ने अपने जीवन को अपनी आत्मकथाओं के माध्यम से सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। महिला आत्मकथाकारों के जीवन में जो घटा है वह सब व्यापक फलक पर उनकी आत्मकथाओं में उद्घाटित हुआ है। उन्होंने अपनी आत्मकथाओं में स्वयं के जीवन में समय, काल व परिस्थितियों से उत्पन्न उतार-चढ़ावों को लिखा है। उन्होंने स्वयं के जीवन से समाज व परवर्ती पीढ़ी को शिक्षा देने का अनुपम कार्य अपनी लेखनी से किया है। कुछ नारी आत्मकथाकार अपनी आत्मकथाओं को सामाजिक मजबूरियों के चलते खुलकर नहीं लिख पाईं, जबकि कुछ नारी आत्मकथाकारों ने अपनी आत्मकथा लिखने में पूरी ईमानदारी बरती है तथा रोचक व रोमांचक अनुभवों को भी खुलकर प्रस्तुत किया है।

‘आपहुदरी—एक जिद्दी लड़की की आत्मकथा’ साहित्यकार रमणिका गुप्ता की आत्मकथा है। इस आत्मकथा में लेखिका ने अपने जीवन में घटित अनेक ऐसे सचों का अनावरण किया है जिनकी कल्पना करना भी सभ्य समाज में स्वीकृत नहीं है। लेखिका का बचपन में उनके परिवार में ही यौन शोषण होता है जिसे रमणिका अपनी आत्मकथा में रेखांकित करती हैं— “मैंने मामू का वह रुद्रावतार, आविर्भाव देखकर, डरकर रोना ही शुरू किया। मैं डर के मारे थर-थर काँप रही थी।”⁵ परिवार एवं पारिवारिक रिश्तों को बालक का सुरक्षा कवच माना जाता है। यहाँ पर इस प्रकार के कृत्य का होना, भयभीत करता है। बहुत सारे लोग इस विषय में सोचते तक नहीं हैं। इसलिए अक्सर ऐसी घटनाओं पर पर्दा डाल दिया जाता है। मगर कई महिला आत्मकथाकारों ने अपने साथ घटित इस प्रकार की घटनाओं से पर्दा उठाकर समाज को सोचने के लिए विवश किया है।

महिला आत्मकथाओं का एक विशिष्ट पक्ष यह भी है कि उन्होंने अपने साथ घटित ज्यादतियों से ही परिचय नहीं कराया है बल्कि अपने अच्छे-बुरे जीवन के सभी पक्षों को खोला है। जिसमें अन्य पुरुषों से अंतरंगता, देह तृप्ति की माँग तथा स्वार्थ इत्यादि पर भी खुलकर बात हुई है। भारतीय समाज के जिन पुरुषों से रमणिका गुप्ता का सामना हुआ उनमें उनका पति, नेता, नेता के साथ चलने वाले छुटभैये, औहदेदार इत्यादि पुरुषों की लंबी फेहरिस्त है। पति के मित्रों से भी यह निकटता बनाती है। आपहुदरी आत्मकथा में स्त्री दैन्य कहीं नजर नहीं आती, अपितु अंतरंगता के विमर्श में भिन्न-भिन्न आयामों को जांचकर स्वयं राह बनाती है। ‘आपहुदरी’, रमणिका गुप्ता के साहस की कहानी है। इसी प्रकार का साहस और जोखिम मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा अग्निहोत्री इत्यादि महिला आत्मकथाकारों ने भी अपनी आत्मकथाओं में उठाया है।

नारी आत्मकथा में उद्वेलन, चीख पुकार, आक्रोश स्पष्ट दिखाई देता है। नारी जो सदियों से भोगती आ रही थी, उसे आत्मकथा लेखन के माध्यम से प्रस्तुत कर पुरुषवादी कट्टरपंथियों के अंतरतम को झंकझोरने लगी है। नारी को विद्यालय, महाविद्यालय, शिक्षण संस्थान, कार्य स्थल पर जाने की सशर्त अनुमति मिलती है। स्त्री के लिए अभिव्यक्ति अधिक जोखिम वाली मानी जाती है। लज्जा को नारी का आभूषण बताया जाता है। इसी प्रकार की स्थितियों का चित्रण अजीत कौर की आत्मकथा में हुआ है। ‘खानाबदोश’ आत्मकथा में अजीत कौर लिखती है— “वैसे जिंदगी में घटनाओं, हादसों की अहमियत ही क्या है? क्या अर्थ है इनका? सब खाली, खोखली, बेहूदा घटनाएँ। चिंदी-चिंदी कतरनें, जिनसे जिंदगी की गुदड़ी सी जाती है।”⁶ एक ओर तो भारतीय समाज में नारी को पवित्रता की मूर्ति माना गया है। दूसरी ओर आज भी उसे अपने स्वतंत्र अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ रही है। आधुनिक नारी के जीवन का यह यथार्थ उनकी आत्मकथाओं में साफ तौर पर दिखाई पड़ता है।

‘आपहुदरी—एक जिद्दी लड़की की आत्मकथा’ में लेखिका रमणिका गुप्ता लड़की के जीवन पर लिखती है— “मैं बड़ी होने लगी, किसी लड़की का बड़ा होना क्या होता है? यह उस लड़की के समझने से पहले दुनिया ही उसे बता देती है। लड़की का बड़ा होना दुनिया की आँखें पहले देख लेती है।”⁷ यहाँ लेखिका ने दर्शाया है कि लड़की के प्रति समाज पूर्व से ही पूर्वाग्रह निर्धारित कर लेता है, उसी अनुरूप लड़की को अपना जीवन जीना होता है। भारतीय समाज में नारी को उसके जन्म से ही परंपरा और मान्यताओं में जकड़ा हुआ है। उसे मर्यादा व त्याग की मूर्ति बनाकर पुरुष सत्ता ने उनके अधिकारों का सदैव से ही हनन किया है। भारतीय समाज एवं परिवार के इसी यथार्थ को महिला आत्मकथाओं में भलि-भाँति उद्घाटित किया गया है। ‘कुछ कहीं कुछ अनकहीं’ आत्मकथा में शीला झुनझुनवाला ने अपने पारिवारिक जीवन के यथार्थ की तस्वीर निम्न कथन द्वारा उकेर दी है— “मैं एक ऐसे घर में पली और बड़ी हुई, जिसके चारों ओर चहारदीवारियाँ ही चहारदीवारियाँ थीं। घर हमेशा फलेटनुमा होते थे, कोटीनुमा नहीं। कोटीनुमा घरों का एक फायदा होता है कि गेट के अंदर ही सुरक्षा के अंदर रहते हुए भी आप बाहर का बहुत कुछ देख सकते हैं।”⁸ हमारे परिवारों में प्राचीनकाल से ही महिलाओं को बड़ा सम्मानजनक स्थान दिया है। भारतीय परिवारों में नारी को दुर्गा, शक्ति, काली, जगदम्बा, लक्ष्मी का रूप मानते हैं, जबकि धरातल पर देखा जाए तो व्यवहारिक रूप से बहुत भिन्नता

है। चूँकि महिला भी समाज का अनिवार्य अंग है। दुनिया की आधी आबादी महिलाओं की है। नारी को सम्मान, पद, प्रतिष्ठा, जिम्मेदारी, खेल, शिक्षा, व्यवसाय, नौकरी, हर क्षेत्र में बराबरी का अवसर मिलना चाहिए। अपितु कुछ मामलों में महिलाएँ पुरुषों से ज्यादा समर्थ होती हैं तथा कार्य अधिक कुशलता, निपुणता व समर्पण भाव से करती है।

मन्नू भण्डारी, चंद्रकिरण, सोनरिक्सा, मालती जोशी, ममता कालिया, मेहरुन्निसा परवेज, कृष्णा अग्निहोत्री, अलका सरावगी, प्रभृति आत्मकथाकारों की आत्मकथाओं के माध्यम से नारी की दिशा और दशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं। “महिला आत्मकथाकारों की कहानियों में महिला विमर्श से जुड़े प्रश्नों को तलाशने की यात्रा में वह अनेक प्रश्नों को जन्म देती है। समाज में परंपरागत दोगम दर्जे के नागरिक के आवरण से निकलकर अपनी पहचान तलाशती नारी घर व बाहर शोषण के दो पहियों के बीच पिसती हुई स्त्री घुटन से मुक्त होना चाहती है। भारतीय परिवारों में नारी को अभी और सशक्त होने की आवश्यकता है। भारतीय नारी का मध्ययुग का इतिहास, शोषण, अन्याय, अनाचार का इतिहास है, किंतु वर्तमान में शिक्षा के प्रचार-प्रसार से भारतीय नारी अपने प्रति होने वाले अन्याय के प्रति जागरूक हुई है। आज विरोध भी पूरी मुखरता से करती है। मैत्रेयी पुष्पा लिखती है कि “धन्यवाद! शुक्रिया उन सबका जो हमें नीची निगाह से देखते हुए हमारी योग्यता को धूल चटाते रहते हैं। हो सकता है यही आहतभाव मुझे अपने बूते खड़े होने की ताकत दे।”⁹ मैत्रेयी पुष्पा विरोधियों का दृढ़ता से सामना करती है और स्वयं को शक्तिशाली बनाती है।

मैत्रेयी पुष्पा ने ‘कस्तूरी कुण्डल बसै’ आत्मकथा में गाँव एवं शहर दोनों ही परिवेशों को उकेरा है। “सिकुरा गाँव . . . मैत्रेयी पुष्पा का पैतृक घर। जन्म, ब्याह और मृत्यु गाँव के सामूहिक मामले होते हैं, जिस गाँव में यह सामूहिक चलन नहीं रहता, उसे शहर के खाते में डाल दिया जाता है, जहाँ किसी से किसी का लेना-देना नहीं। फिर भी शहर सुविधाओं का खजाना है, यह गाँव वालों की आम राय है।”¹⁰ इसी तरह नगरीय परिवेश की अभिव्यक्ति भी महिला आत्मकथाओं में सायास हुई है।

अपनी इच्छाओं को दबा लेने की कला नारी में कूट-कूटकर भरी होती है। कुछ परिवारों में जन्म से ही नारी को भेदभाव झेलना पड़ता है। बेटों को शुद्ध पोषक तत्वों से भरा भोजन तथा छप्पन भोग मिलते हैं, जबकि बेटियों को सूखी रोटी, झूठन से गुजारा करना पड़ता है। बेटे की शिक्षा पर भी समाज अधिक जोर देता है, जबकि बेटे को घरेलू काम तक सीमित रखा जाता है। इसलिए स्त्री को दूसरों की इच्छाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। बेशक उसके बहुत सपने हो, लेकिन उन सभी को भुला देना या दबा देना ही स्त्री की नियति बन जाता है। लेखिका पद्मा सचदेव की आत्मकथा ‘बूंद-बांवड़ी’ की इन पंक्तियों में स्त्री जीवन की यही व्यथा उजागर हुई है—

“मन आच्छा पींगा लोआरा लैइए,

दोनों पैरुए अम्बर हुई लै अऊं।

जी चाहता है पैंग बढ़ाकर दोनों पैरों से आकाश को छू लूँ, जो मुझे दूर से अंगूठा दिखाकर चिढ़ाते हैं, उन तारों को अम्बर से नाँच लूँ।”¹¹ इस स्थिति में पारिवारिक रिश्तों से बाहर के साथी से अपनत्व पाती है। ऐसे रिश्तों पर प्रकाश डालते हुए लेखिका लिखती हैं “उन दिनों मेरे बिस्तर की सलवटें ठीक करने मेरी सहेली जगदम्बा आती थी वो एकदम खामोश स्तब्ध आकर मेरी चादर की सलवटें ठीक करती। उसके चेहरे की खामोशी उसकी आँखों की असमर्थता मैं देख पाती थीं, पर कुछ न कहती थी। मैंने उसी को याद करते हुए साथी कविता लिखी थी—

“मेरे साथी

मेरे जख्में या बगदी आखिरी बूंदें दी गवाई

मेरी जिंदगी छा कुन्झां

साहरियां कर दे तेरे हत्थे छा धमाई।

मेरे साथी, मेरे जख्मों से बहती आखिरी बूंदों की गवाही मेरी जिंदगी की सलवटें

मेरी जिंदगी की सलवटें

सीधे करते तुम्हारे हाथों पर मैं बलिहारी।”¹²

उपरोक्त अवस्थितियाँ स्त्री जीवन में व्याप्त रिक्तता का मार्मिक विवेचन करती है। जिन्हें महिला आत्मकथाओं में बड़ी सूक्ष्मता से उकेरा गया है। अस्तु, महिला आत्मकथाएँ भारतीय नारी के जीवन का सर्वांग विवेचन करती हैं। विवेचन के इस क्रम में वे बाह्य व आंतरिक तहों तक पहुँचती हैं और कई बार अंतरंगता की सीमाओं को तोड़कर स्वतः मुक्त हो जाना चाहती हैं। लेकिन उनकी मुक्ति का यह मार्ग अभी बहुत दूर है। हाँ, यह अवश्य है कि भारतीय महिला ने इस दिशा में एक कदम अवश्य बढ़ा दिया है। इसी की सार्थक पुष्टि उन्होंने अपनी आत्मकथाओं में की है। निष्कर्षतः आधुनिक भारतीय महिला ने अपने आपको परंपरा एवं मर्यादा के साथ-साथ शिक्षित व आत्मनिर्भर बनाया है। आधुनिक महिला ने स्वयं की नई परिधि व वितान रचा है। जिसकी उपस्थिति समाज के सभी क्षेत्रों में दिखाई पड़ती है। हिंदी साहित्य भी इससे अछूता नहीं है। महिला साहित्यकारों की एक अन्वर्त परंपरा है जिसने हिंदी साहित्य को अपनी लेखनी से अभिसंचित किया है। महिला आत्मकथाएँ; महिला साहित्यकारों के सृजन का ऐसा ही उर्वर लोक हैं जिसमें उन्होंने अपनी परिधि व विस्तार का मार्ग स्वयं निर्मित किया है।

संदर्भ

1. राजेन्द्र द्विवेदी, साहित्यशास्त्र का पारिभाषिक शब्दकोश, आत्माराम एंड संस, दिल्ली, 110006, संस्करण 1963, पृ0सं0-34
2. प्रो० राजेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव, हिंदी गद्य की नवीन विधाएँ, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 221001, संस्करण 1998, पृ0सं0-24
3. धीरेन्द्र वर्मा (सं०), हिंदी साहित्य कोश भाग-1, पारिभाषिक शब्दावली, राजपाल एंड संस प्रकाशन, नई दिल्ली 110006, संस्करण 2005, पृ0सं0-19
4. इक्कीसवीं सदी का महिला आत्मकथा लेखन : संघर्ष और सृजन, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा, अप्रकाशित शोध प्रबंध से उद्धृत
5. रमणिका गुप्ता, आपहुदरी, सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2022, पृ0सं0-33
6. अजीत कौर, खानाबदोश, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2020, पृ0सं0-35
7. रमणिका गुप्ता, आपहुदरी, सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2022, पृ0सं0-36
8. शीला झुनझुनवाला, कुछ कही कुछ अनकही, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, तीसरा संस्करण 2017, पृ0सं0-39
9. मैत्रेयी पुष्पा, गुड़िया भीतर गुड़िया, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2019, पृ0सं0-21
10. मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2021, पृ0सं0-208
11. पद्मा सचदेव, बूंद बावड़ी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999, पृ0सं0-53
12. पद्मा सचदेव, बूंद बावड़ी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999, पृ0सं0-134-135